**E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi**

# विक्रमोर्वशीयम्

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

कालिदासकृत विक्रमोर्वशीय पाँच अङ्कों का 'त्रोटक' है। त्रोटक एक प्रकार का 'उपरूपक' होता है जिसमें पाँच, सात, आठ या नौ अङ्क होते हैं, देव एवं मनुष्य दोनों का वर्णन होता है, शृंगार-प्रधानता एवं विदूषक की प्रत्येक अङ्क में उपस्थिति रहती है। शेष लक्षण नाटकवत होते हैं।

विक्रमोर्वशीय में राजा पुरूरवा (विक्रम) तथा दिव्य-पात्र उर्वशी की प्रेम-कथा दी गयी है। पुरुरवा और उर्वशी की कथा ऋग्वेद, यजुर्वेद, शतपथब्राह्मण, विष्णुपुराण, मत्स्यपुराण और महाभारत आदि में मिलती है। मत्स्यपुराण में दी गयी उर्वशी-कथा से इस नाटक की कथावस्तु का अधिक साम्य है। कालिदास ने वैदिक आख्यान को नवीन रूप दिया है और इसमें कई नई बातें जोड़ी हैं। जैसे भरतमुनि का उर्वशी को मर्त्यलोक में जाने का शाप; कार्तिकेय का नियम कि उसके उपवन में आने वाली स्त्री लता बन जाएगी; उर्वशी का लता बनना और पुरुरवा का विलाप; सारा पंचम अंक नवीन है।

राजा पुरूरवा केशी राक्षस से आक्रान्त अप्सरा उर्वशी की रक्षा करता है, राजा और उर्वशी परस्पर आसक्त हो जाते हैं (अंक १)। उर्वशी का प्रेमपत्र विदूषक की अकुशलता से देवी औशीनरी को मिल जाता है। राजा किसी प्रकार उसके कोप का शमन करते हैं (अंक २)। स्वर्ग में भरत-द्वारा निर्देशित एक नाटक में अभिनय करते हुए उर्वशी 'पुरुषोत्तम विष्णु' के स्थान पर 'पुरूरवा' का नाम ले लेती है जिससे कुपित होकर भरतमुनि उसे शाप देते हैं कि पुत्र-दर्शन तक वह मृत्युलोक में रहे। वह राजा पुरूरवा के पास रहने लगती है (अंक ३)। राजा के एक विद्याधर कुमारी पर मुग्ध होने से कुपित उर्वशी गन्धमादन उपवन में भाग जाती है जहाँ शापवश वह लता बन जाती है। राजा के शोकाकुल होने पर आकाशवाणी होती है कि यदि राजा संगमनीय मणि लेकर लता-रूपी उर्वशी का आलिंगन

करे तो वह पूर्वरूप में आ जायेगी। राजा ऐसा करके उसे पुनः पूर्व-रूप में ले आते हैं (अंक ४)। राजा की मणि को एक गिद्ध चुरा लेता है किन्तु वह सहसा बाण से मारा जाता है। बाण पर 'पुरुरवा का पुत्र आयुष्' अंकित है, यह उर्वशी-पुत्र च्यवन ऋषि के आश्रम में छिपाकर रखा गया था जिससे उर्वशी देख न पाये। इसी समय नारद इन्द्रलोक से आकर सूचना देते हैं कि इन्द्र की युद्ध में पुरुरवा की सहायता चाहिए, अतः उन्होंने उर्वशी को सदा पुरूरवा के साथ रहने का वर दिया है (अंक ५)। कालिदास ने प्राचीन आख्यान में कई नयी बातें जोड़ी हैं जैसे- भरत द्वारा उर्वशी को शाप, उपवन में उर्वशी का लता बन जाना, इन्द्र का उर्वशी को वर मिलना इत्यादि। वैदिक आख्यान वस्तुतः एक प्राकृतिक उपादान की व्याख्या के रूप में था कि पुरूरवस् (घोर गर्जनकारी मेघ) और उर्वशी (विद्युत्) परस्पर संयुक्त हैं, उनके संयोग से आयुष् (अन्न) उत्पन्न होता है। इसका मानवीकरण करके शृङ्गार के रूप में कवियों ने आख्यान बनाया।

विक्रमोर्वशीय में पात्रों के अन्तरङ्ग का उत्कृष्ट चित्रण है, भाषा तथा भावाभिव्यक्ति में कवि की विकासोन्मुखी प्रतिभा उद्भासित होती है एवं शृङ्गार के दोनों पक्षों (सम्भोग और विप्रलम्भ) का इसमें मार्मिक उद्भावन है। कवि ने चतुर्थ अंक में अपभ्रंश भाषा की गीतियों में पुरूरवा का विलाप प्रस्तुत किया है जो काव्य की दृष्टि से उत्कृष्ट है किन्तु उनका वैपुल्य उद्वेजक है जनभाषाओं में होनेवाले विरहोद्गार से प्रेरित हो कवि ने उनका प्रयोग इस नाटक में किया होगा। कालिदास के काव्यों के गुण (जैसे- प्रसादगुण, वैदर्भी, उपमा, लालित्यपूर्ण भाषा इत्यादि) यहाँ विकसित रूप में प्राप्त होते हैं।

उर्वशी के सौन्दर्य के चित्रण में कवि को कहना पड़ा है कि वेदाभ्यास के कारण विषय विलास से दूर रहने वाले वृद्ध ब्रह्मा इस सुन्दरी को नहीं बना सकते थे; अवश्य ही कान्तिप्रद चन्द्र या शृङ्गारमात्र विलासी कामदेव अथवा पुष्पाकर वसन्त ही प्रजापति बनकर इसकी सृष्टि में लगा होगा-

**अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः**
**शृङ्गारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो नु पुष्पाकरः।**
**वेदाभ्यासजडः कथं नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो**
**निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।।**

उर्वशी जब राक्षसों के भय से मूर्च्छित होकर पुनः चेतना प्राप्त कर रही थी तब उसकी इस दशा की वर्णना में कवि ने कमनीय उत्प्रेक्षाओं की माला पिरो दी है-

**आविर्भूते शशिनि तमसा मुच्यमानेव रात्रिः**

**नैशस्यार्चिहुतभुज इव च्छिन्नभूयिष्ठधूमा।**

**मोहेनान्तर्वरतनुरियं लक्ष्यते मुक्तकल्पा**

**गङ्गा रोधः पतनकलुषा गच्छतीव प्रसादम्।।**

अर्थात् मूर्च्छा दूर होने पर आपकी सखी ऐसी लगती है जैसे चन्द्रमा के निकल आने पर अन्धकार से मुक्त होती हुई रात्रि हो, या रात के समय बिना धुएँवाली अग्नि की लपट हो, या गंगा की वह धारा हो जो कगार (तट) के गिर जाने से मलिन होकर पुनः स्वच्छ हो गयी हो।

संयोग शृंगार का चित्रण तृतीय अङ्क के अन्त में प्रकर्ष प्राप्त करता है। राजा उर्वशी को कहते हैं कि मेरे मनोरथ के पूर्ण होने से पहले तुम्हारे विरह में रातें सौ-गुनी लम्बी लगती थीं, यदि वे अब तुम्हारे मिल जाने पर भी वैसी ही लम्बी लगें तो मैं अपने को भाग्यवान् समझूँ–

**अनुपनतमनोरथस्य पूर्वं, शतगुणितेव गता मम त्रियामा।**

**यदि तु तव समागमे तथैव, प्रसरति सुभ्रु ततः कृती भवेयम्।।**

पूरा चतुर्थ अंक विप्रलम्भ की उद्भावना में समर्पित है। मेघदूत या रघुवंश के अष्टम सर्ग या कुमारसम्भव के चतुर्थ सर्ग के समान यह विलापमय है, उर्वशी के विरह में राजा का विलाप प्रायः कवित्वमय है, कवि का नाट्यकार-रूप गौण हो गया है। इसमें अप्रत्याशित रूप से ७६ पद्यों का प्रयोग है जिनमें अधिकांश प्राकृत या अपभ्रंश के हैं। प्रकृति के विभिन्न उपादानों से राजा उर्वशी का पता पूछते हैं किन्तु वह तो लता बन चुकी है। राजा विक्षिप्त होकर मेघों को राक्षस समझते हैं; इन्द्रधनुष को राक्षस का धनुष, घोरवृष्टि को बाणों की वर्षा तथा बिजली को उर्वशी मानकर उर्वशी के अपहरण की आशंका में बड़बड़ाते हैं किन्तु शीघ्र ही उनका भ्रम दूर होता है कि ये तो प्राकृतिक उपादान हैं-

**नवजलधरः सन्नद्धोऽयं न दृप्तनिशाचरः**

**सुरधनुरिदं दूराकृष्टं न नाम शरासनम्।**

**अयमपि पटुर्धारासारो न बाणपरम्परा**

**कनकनिकषस्निग्धा विद्युत् प्रिया मम नोर्वशी।।**

विक्रमोर्वशीय की मुख्य विशेषताएँ ये हैं:- (१) इसमें कवि की प्रतिभा का पर्याप्त विकास है। (२) मालविकाग्निमित्र की अपेक्षा इसमें पात्रों की अन्तर्दशा का सुन्दर चित्रण है। (३) दिव्य उर्वशी में मानवीय भावों का सुन्दर चित्रण है। (४) भाषा और भावों में कवि की प्रतिभा विकासोन्मुख है। भाषा में सरलता के साथ प्रांजलता है। प्रसाद के साथ माधुर्य है। भावों में अन्तर्द्वन्द्व और मानसिक दशा का सुन्दर विश्लेषण है। (५) चतुर्थ अंक में राजा का विलाप अपभ्रंश छंदों में है। कवित्व की दृष्टि से ये पद्य अत्यन्त सुन्दर हैं, पर अपभ्रंश पद्यों की अधिकता खटकती है। (६) गतिशीलता में यह मालविकाग्निमित्र से न्यून है, परन्तु विचार वैशारद्य में यह बहुत आगे है। (७) कवि की वर्णनशक्ति प्रबुद्ध रूप में है। (८) अंक २ और ३ नाटक की प्रगति में बाधक हैं। (६) इसमें शृंगार के दोनों पक्षों- संभोग और विप्रलम्भ का सुन्दर परिपाक हुआ है। (१०) छोटे वाक्य, मुहावरेदार प्रयोग, सूक्ष्म प्रकृति-निरीक्षण, कथानक का सौन्दर्य, करुणरस का प्रवाह, हास्यरस की पुट तथा काव्य-सुषमा नाटक को अत्यन्त मनोहर बनाती हैं।